वेदान्त दर्शन—आस्तिक दर्शनों में वेदान्त सर्वप्रधान है। उसमें उस ब्रह्मज्ञान का शास्त्रीय दृष्टि से विवेचन किया जाता है, जो उपनिषदों में प्रतिपादित है। इस दर्शन के आदि-प्रवर्तक बादरायण या कृष्ण द्वैपायन व्यास थे। उन्होंने वेदान्त विषयक जिन सूत्रों की रचना की थी, वे ब्रह्मसूत्र या बादरायणसूत्र कहाते हैं। प्राचीन वैदिक धर्म समन्वयात्मक है। उसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सब को स्थान प्राप्त है। जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्षप्राप्ति है, जिसका एकमात्र साधन ब्रह्मज्ञान है। ब्रह्मसूत्रों में इसी ब्रह्मज्ञान का निरूपण किया गया है। ब्रह्म वह है, जिससे जगत् की उत्पत्ति होती है, जिसमें जगत् स्थित रहता है, और जिसमें उसका लय हो जाता है। अतः यथार्थ सत्ता ब्रह्म ही है, कोई अन्य नहीं। गुप्त युग और उसके पश्चात् जब वैदिक धर्म का विशेष रूप से पुनरुत्थान हुआ, तो वेदान्त दर्शन के आधारभूत ब्रह्मसूत्रों की भी ऐसे नये ढंगों

Scanned with CamScanner

से व्याख्या की जाने लगी, जिनसे कि लोगों की अध्यात्म एवं परलौकिक ज्ञान विषयक जिज्ञासाएं शान्त की जा सकें। इस से पूर्व बौद्ध पण्डित विश्व की यथार्थता तथा वास्तविकता के सम्बन्ध में अनेक गम्भीर सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर चुके थे, जिनके कारण बहुत-से बौद्ध दार्शनिक सम्प्रदायों का विकास हो गया था। जगत् और आत्मा आदि के सम्बन्ध मे इन सम्प्रदायों के मन्तव्य भिन्न-भिन्न थे। वैभाषिक और सौत्रान्तिक सदृश सम्प्रदाय जगत् को सत्य मानते थे, और योगाचार तथा माध्यमिक सम्प्रदाय असत्य। बौद्ध धर्म के विविध सम्प्रदायों के दार्शनिक सिद्धान्त क्या थे, इस पर संक्षिप्त रूप से भी प्रकाश डाल सकना इस ग्रन्थ में सम्भव नहीं है। पर इसमें सन्देह नहीं, कि बौद्ध दर्शन अत्यन्त विकसित था, और उस युग के न केवल भारतीय विद्वान् ही, अपितु तिब्बत, चीन और मध्य एशिया आदि अन्य देशों के पण्डित भी उसका अध्ययन-अध्यापन गौरव की बात मानते थे। इस दशा में वैदिक धर्म के पुनरुत्थान के इस युग में यह भी आवश्यक था, कि उपनिषदों के ब्रह्म ज्ञान को ऐसे दार्शनिक ढंग से प्रस्तुत किया जाए, जो देश-विदेश के विद्वानों को स्वीकार्य हो। यह कार्य प्रधानतया शङ्कराचार्य द्वारा किया गया, जो अप्रतिम प्रतिभाशाली विद्वान् और धार्मिक नेता थे, और जिन्होंने केवल ३२ वर्ष के जीवनकाल में हिमालय से कन्याकुमारी तक सम्पूर्ण भारत में सत्य सनातन वैदिक धर्म की विजयपताका फहरा दी थी। वे केरल प्रदेश के एक ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए थे, और छोटी आयु में ही सर्वशास्त्र निष्णात होकर उन्होंने अपने मन्तव्यों का प्रचार प्रारम्भ कर दिया था। ब्रह्म सूत्रों के वास्तविक अभिप्राय को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने उन पर एक भाष्य लिखा, जो शांकर भाष्य के नाम से प्रसिद्ध है। साथ ही, उपनिषदों और गीता पर भी उन्होंने भाष्य लिखे। इनमें उन्होंने वेदान्त के अद्वैतवाद का बड़ी योग्यता के साथ प्रतिपादन किया है। उनका मत था, कि ब्रह्म ही सत्य है, जगत् मिथ्या है, और जीव ब्रह्म से भिन्न नहीं है। ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य कोई यथार्थ सत्ता नहीं है, इस मन्तव्य के कारण ही शंकराचार्य का मत अद्वैतवाद कहाता है। अपने ग्रन्थों में शंकर ने अद्वैतवाद के प्रतिपादन के साथ-साथ बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों का खण्डन भी किया, और इस प्रकार वे अपने मत की उत्कृष्टता सिद्ध करने में समर्थ हुए। पर यह भी स्वीकार करना होगा, कि शंकराचार्य के अद्वैतवाद पर बौद्धों के शून्यवाद का स्पष्ट प्रभाव है। जगत् के मिथ्यात्त्व का प्रतिपादन बौद्धों के भी अनेक सम्प्रदायों द्वारा किया गया था। इसीलिए कतिपय विचारकों ने शंकराचार्य को प्रच्छन्न बौद्ध तक कहने में संकोच नहीं किया। वेदान्त के इस महान् आचार्य के काल के सम्बन्ध में विद्वानों में बहुत मतभेद हैं। इन विविध मतों का उल्लेख न कर यहां यह निर्देश करना ही पर्याप्त होगा कि बहुसंख्यक आधुनिक विद्वान् उनका जीवनकाल ७८८ से ८२० ईस्वी तक मानते है, यद्यपि लोकमान्य तिलक सदृश कतिपय अन्य विद्वान् उनके समय को इससे एक सदी पहले ले जाना उचित समझते हैं। पर यह स्पष्ट है कि ऐतिहासिकों द्वारा स्वीकृत भारतीय तिथिक्रम के अनुसार शङ्कराचार्य का काल पूर्व-मध्य युग के प्रथम चरण में ही था। ब्रह्मसूत्र, उपनिषद् और गीता पर शंकराचार्य ने जो भाष्य लिखे, बाद में अनेक विद्वानों ने उन पर टीकाएं लिखीं। ब्रह्मसूत्र शांकर भाष्य

Scanned with CamScanner

पर लिखी गई टीकाओं में वाचस्पति मिश्र की भामती टीका सबसे महत्त्वपूर्ण है। भामती टीका पर भी बाद में अन्य टीकाएं लिखी गईं, जिनमें अमलानन्द की कल्पतरु टीका और उस पर अप्पय दीक्षित की कल्पतरुविमल टीका उल्लेखनीय हैं।

शंकराचार्य के अतिरिक्त अन्य भी अनेक ऐसे दार्शनिक हुए, जिन्होंने अद्वैतवाद के प्रतिपादन के लिये महत्त्वपूर्ण कार्य किया। मण्डनमिश्र शंकराचार्य के समकालीन थे, और प्रसिद्ध मीमांसक कुमारिल भट्ट के शिष्य थे। शंकर से शास्त्रार्थ में परास्त होकर उन्होंने उनकी शिष्यता स्वीकार कर ली थी, और वे भी अद्वैतवाद के समर्थक हो गए थे। अपने मत के प्रतिपादन के लिए उन्होंने भी अनेक ग्रन्थों की रचना की। पूर्व-मध्य युग के दार्शनिक सिद्धान्तों में शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित अद्वैतवाद का मूर्धन्य स्थान था। अतः इस युग में कितने ही ऐसे दार्शनिक विद्वान् हुए, जिन्होंने इस वाद के समर्थन में भाष्यों, टीकाओं और वृत्तियों के रूप में तथा स्वतन्त्र रूप से विविध ग्रन्थ लिखे। इन में सुरेश्वराचार्य, पद्मपादाचार्य, सर्वज्ञमुनि, आनन्दगिरि और गोविन्दानन्द आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन विद्वानों के पाण्डित्य का ही यह परिणाम हुआ, जो अद्वैतवाद पूर्व-मध्य युग का प्रमुख दार्शनिक सिद्धान्त बन गया। महाकवि श्रीहर्ष का उल्लेख इसी अध्याय के पहले प्रकारण में किया जा चुका है। उनका समय बारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में था। कवि होने के साथ-साथ श्रीहर्ष दार्शनिक भी थे। खण्डनखण्डखाद्य नाम से उन्होंने एक अत्यन्त उत्कृष्ट दार्शनिक ग्रन्थ लिखा था, जिसमें कि अद्वैतवाद का युक्तिसंगत रूप से प्रतिपादन किया गया है। पूर्व-मध्य युग के बाद भी शंकराचार्य के अद्वैतवाद के समर्थन तथा व्याख्या में अनेक गम्भीर ग्रन्थ लिखे जाते रहे, जिनमें चित्सुखाचार्य की खण्डनखण्डखाद्य पर चित्सुखी टीका और मधुसूदन सरस्वती का अद्वैत-सिद्धि ग्रन्थ विशेष महत्त्व के हैं।

Scanned with CamScanner